International Journal of Applied Research 2016; 2(1): 446-448

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(1): 446-448
www.allresearchjournal.com
Received: 23-11-2015
Accepted: 25-12-2015

डॉ. शिवदत्त शर्मा
पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग राजकीय महाविद्यालय ढलियारा कांगडा हि.प्र.

Correspondence
डॉ. शिवदत्त शर्मा
पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग राजकीय महाविद्यालय ढलियारा कांगडा हि.प्र.

सिद्ध साहित्य–परम्परा और प्रवृत्तियां

डॉ. शिवदत्त शर्मा

भारत में अनेक धर्म, सम्प्रदाय समय समय पर अपने गौरव को प्राप्त हुए तथा किन्हीं विकृतियों के कारण उनका ह्रास भी हुआ, तथा पतन को प्राप्त हुए। वैदिक धर्म अपने विशिष्ट गुणों के कारण अपने अस्तित्व को बनाए रखने में सफल रहा। वैदिक धर्म के बाद बौद्ध धर्म भी अधिक लोकप्रिय हुआ। वैदिक धर्म में कुछ विकार आने के कारण प्रतिक्रिया स्वरूप बौद्ध धर्म का विकास हुआ। बौद्ध धर्म की कुछ अपनी विशेषताएं थीं जिनके कारण अपने प्रारम्भिक काल में इसे बडा महत्व मिला तथा सर्वाधिक लोकप्रिय हुआ। कालान्तर में इसमें भी कई विकार उत्पन्न हो गए तथा इस धर्म का कई शाखाओं में विभाजन होने लगा।महात्मा बुद्ध ने जिस धर्म की स्थापना की थी, उसने बौद्धकाल में अत्यधिक उन्नति की, परन्तु कालान्तर में इसका ह्रास प्रारम्भ हुआ। इस धर्म की दो शाखाएं बन गईं। महायान तथा हीनयान। उत्तरी भारत में धीरे धीरे वैष्णव धर्म और भक्ति का प्रसार बढ रहा था। शंकराचार्य तथा कुमारिल भट्ट जैसे महापुरुषों के प्रभाव से बौद्ध धर्म को कडी टक्कर झेलनी पडी। बौद्ध धर्म के पतन का दूसरा कारण यह भी था कि इस काल तक आते आते महायान शाखा में भी अनेक विकृतियां उत्पन्न हो चुकीं थीं। अन्ततः बौद्ध धर्म की महायान शाखा भी पुनः दो भागों में विभाजित हो गई। वज्रयान और सहजयान। जो बौद्ध उपासक जादू, टोना,–टोटका आदि के द्वारा सिद्धि प्राप्त करना चाहते थे वे सिद्ध कहलाए। श्री पर्वत इन सिद्धों का मुख्य केन्द्र था।1

इन सिद्धों ने अपनी प्रचलित जनसाधारण भाषा में अपने विचारों, मतों आदि को आम लोगाों तक पहुंचाने का सफल प्रयास किया। इन्होंने इसी जनभाषा में अपने सम्प्रदाय के सिद्धान्तों, विचार धारा आदि को लिपिबद्ध कराया। सभी सिद्ध बाह्य पूजा, जातिपाति, तीरथ आदि के घोर विरोधी थे। इन्होने इसकी जगह अनेक रूपकों द्वारा योगसाधनाके तत्वों का निरूपण किया। अपने सम्प्रदाय के नियमों सिद्धान्तों का परिचय कराने के लिए जिस साहित्य का निर्माण किया उसे सिद्धसाहित्य कहते हैं। इनके प्रमुख ग्रन्थों में चर्यापद, योगचर्या, डोम्बि, गीतिका आदि सिद्ध साहित्य अत्यधिक प्रसिद्ध हैं।2

भारतीय दर्शन के अनुसार सिद्धों की संख्या चौरासी मानी गई हैं। इनमें लुईपा, शबरीपा, सरहपा, कण्हपा, जालंधरपा, कपालपा, आदि प्रमुख हैं। सिद्धों ने अपनी रचनाओं में योगसाधना केद्वारा अन्तःकरण की शुद्धि आदि पर बल दिया हैं तथा रूढियों एवं आडम्बरों का कडा विरोध किया। इसके साथ ही उन्होने उपभोग वाद व साधना के रूप में मद्य–मैथुन का सेवन भी स्वीकार किया। सिद्धों ने निर्वाण के सुख को सहवास–सुख के समान घोषित कियां। सिद्धों ने सिद्धि प्राप्त करने के लिए किसी स्त्री, जिसे सिद्ध शक्ति–योगिनी या महामुद्रा कहते थे, का योग या सेवन भी आवश्यक बताया। रहस्यवाद इनकी मूल प्रवृत्ति थी। सिद्ध–साहित्य की प्रवृत्तियों को निम्न लिखित वर्गों में बांटा जा सकता है।

1 आडम्बर और रूढियों का खण्डन

सिद्ध साहित्य से स्पष्ट होता है कि सिद्धों ने समाज में प्रचलित पाखण्ड, आडम्बर, रूढि, बाह्याचार आदि का डट कर विरोध किया। डॉ रामकुमार वर्मा के अनुसार– निराशावाद के भीतर से आशावाद का संदेश देना, संसार की क्षणिकता में उसके वैचित्र्य का इन्द्रधनुषी चित्र खींचना इन सिद्धों की कविता का गुण था और उनका आदर्श था–जीवन की भयानक वास्तविकता की अग्नि से निकलकर मनुष्य को महासुख के शीतल सरोवर में अवगाहन करना। 3 इस सन्दर्भ में ही सरहपाद की निम्न पंक्तियां देखिए जिनमें वे पंडितों के शास्त्र–ज्ञान का विरोध करते हैं–

पंडिअ सअल सत्त बक्खाणइ,
दे हहि रुद्ध बसंत न जाणइ।
अमणागमण ण तेन विखंडिअ,
तोवि णिलज्जइ भणइ हउं पंडिअ।।

इस प्रकार सिद्धों ने ब्रह्म, ईश्वर, जाति–पांति, वेद, यज्ञ आदि का खण्डन किया है, क्योंकि उनकी दृष्टि में ये सभी पाखण्ड हैं। ऐसी बंधी–बंधाई लीक पर चलकर किसी की मुक्ति नहीं हो सकती–4

छड्डहु रे अलीका बन्धा।
से मुंचहु जो अच्छहु धन्धा।।

2 रहस्यभावना

सिद्ध साहित्य में दिखाई देता है कि सिद्धों ने आत्मा व परमात्मा के मिलन के लिए अनेक प्रतीकों का प्रयोग किया है।स्पष्ट है कि आध्यात्मिक व आत्मिक अनुभवों को सीधे, सरल, स्पष्ट, शब्दों में तथा व्यावहारिक भाषा में व्यक्त नहीं किया जा सकता । रहस्य की अनुभूति दूसरे अनुभवों से भिन्न है, अतः इसे अभिव्यक्त करने के लिए सिद्धों ने उलटबासियों व प्रतीकों का अधिक प्रयोग किया है। इन उलट बासियों व प्रतीकों का प्रयोग योगसाधना के अंगों के अनुरूप ही हुआ है।5

बिशि अंधारी मूसा करअ अचारा।
अमिअ–भखअ करण अहारा।।
मर रे जोइया! मूसा पवना।
जूण तुटइ अवणा–गवणा।।
भग बिन्दारअ मुसा खनअ गाती।
चंचल मूसा कलियां नाशक थाती।।

इसी प्रकार अन्य सिद्धों ने भी अपनी रचना में उलटबासियों का प्रयोग करते हुए अपनी रहस्यानुभूति को प्रकट किया है–
बलद बिलाएल गविआ बांझे। पिटा दुहिए एतिना सांझे।।
जे सो बुज्झी सो धनि कुधी। जो सो चोर सोइ साधी।।

3 अन्तर्मुखी साधना पर बल

सिद्धों ने एक ओर पाखण्ड, मूर्ति पूजा, जातिपाति, वेद, बाह्याचार आदि का विरोध किया है। दूसरी ओर मनुष्य को अन्तर्मुखी–साधना अपनाने का भी आह्वाहन किया है। अन्तर्मुखी–साधना के लिए शरीर की शुद्धि परमावश्यक मानी गई है। सिद्धों का मत है कि मनुष्य के शरीर में जो सहस्त्रार तथा कुण्डलिनी है, वही वास्तव में शिव और शक्ति है। 6उदाहरण के लिए विरुपा की वारुणी प्रेरित अन्तर्मुखी–साधना की पद्धति को देखिए–

सहजे थिर करि वारुणी साथ।
अजरामर होइ दिट कांध।।
दशमि दुआरत चिह्न देखइआ।
आइल गराहक अपणे बिहआ।।
चउशठि घडिए देर पसारा ।
पइठल गराहक नहि निसारा।।

4 तांत्रिक साधना में मद्य–मैथुन का उपभोग

सिद्धों ने अपनी साधना में मद्य–मैथुन के उपभोग को सम्मिलित किया हे। तान्त्रिक साधना के अन्तिम चरणों में तो महासुखवाद ने सहवास सुख का ही रूप धारण कर लिया था। गुह्य समाज की स्थापना के साथ साथ इन सिद्धों ने मदिरा और मैथुन की अनिवार्यता को स्वीकार कर लिया था। सिद्धों ने सिद्धि को प्राप्त करने के लिए किसी योगिनी का सहचर्य आवश्यक मान लिया था। इन तांत्रिक सिद्धों की साधनाओं में डोमिनी, रजकी, महामुद्रा आदि के नाम उंच–नीच वर्ण की स्त्री के साथ व्यभिचार किया जाता था। 7 एक स्थान पर उदाहरण के लिए सिद्ध कण्हपा अपनी कुण्डलिनी को जाग्रत करने के लिए डोमिनी का आह्वान करते हैं–

नगर बाहिरे डोंबी तोहरि कुडिया छइ।
छोइ जाद सो बाम्ह नाडिया।।
आलो डोंबि! तोए सम करिब म सांग। निधिण कण्ह कपाली जोइ लाग।।
एक्क सो पदमा चौषट्टि पाखुडी। तढि चढि नाचअ डोंबी बापुडी।।
ळालो डोंबि! तो पुछनि सद्भावे। अइससि जासि डोंबी काहरि नाबे।

5 गुरु महिमा

सिद्धों ने गुरु की महत्ता को मुक्त कण्ठ से स्वीकार किया है। सिद्धों के अनुसार सहज सुख अथवा महासुख जिसे निर्वाण भी कहते हैं उसकी प्राप्ति के लिए गुरु का होना अनिवार्य है। गुरु साधक की सफलता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है गुरु के बिना साधक योगसाधना में सफल नहीं हो सकता। प्रायः सभी सिद्धों ने अपनी अपनी रचनाओं में गुरु के महत्व को प्रतिपादित किया हैं।' 8 उदाहरण के लिए यह पद देखा जा सकता है जिसमें डोम्मिपा की इन पंक्तियों में गुरु की महत्ता का वर्णन है–

गंगा जउना माझेर बहर नाइ।
तांहि बु डिली मातंगि पोइआली से पार करई।।
बाहतु डोम्बी बाह लो डोम्बी वाटत भइलउछारा।
सदगुरु पाउ ए जाइब पुणु जिणउरा।।

6 शांत एवं श्रृंगार रस का प्राधान्य

सिद्ध मूल रूप में साधक थे, अतः उनकी रचनाओं में मुख्य रस शांत ही है। वे अपनी रचनाओं में असमानता, भेदभाव की भर्त्सना करते हैं तथा वाक् संयम, आन्तरिक शुद्धि पर बल देते हैं। उनका कथन है कि गंगा, यमुना, प्रयाग आदि में स्नान करने से शरीर में पवित्रता नहीं आती, मन को पवित्र करने से ही तन पवित्र होता है–9

एत्थु में सुरसरि जमुणा एत्थु ले गंगा साअक।
एत्थु पयाग वणारसि, एत्थु से चन्द्र दिवाकर।।

सिद्धों ने तांत्रिक–साधना के अन्तर्गत नारी को शक्ति, महामुद्रा, या डाकिनी कहकर उसके उपभोग की भी बात की हैं। इसी लिए उनके काव्य में कई जगह दाम्पत्य–युग्मों की कीडा,उनके कार्यव्यापार आदि का भी चित्रण हुआ है। सिद्धों ने प्रतीकों के माध्यम से अपनी श्रृंगार भावना को निरूपित किया है। 9

जिमिउ लोण विलिज्जइ पाणिएहि, तिमिधरणी लइ चित्त।
समरस जाइ तक्खणे,जुइ पुणु हो सब चित्त।।

7 उपभोगवादी दृष्टिकोण

सिद्धों ने बौद्ध धर्म के दुखदायी एवं कष्ट कारक साधनों की जगह साहित्य में उपभोग वादी दृष्टिकोण का परिचय दिया हैं। उन्होंने चार्वाक दर्शन की तरह यावत जीवेत सुखेन जीवेत के सिद्धान्त का अनुसरण करते हुए सुख और भोग से युक्त जीवन को अपना ध्येय बताया हैं। सिद्धों के अनुसार न तो भोग महत्व हीन हैं और न ही स्वाभाविक प्रवृत्तियों का दमन करना। सिद्ध कण्हपा तो स्पष्ट कहते हैं–जब तक अपनी गृहिणी का उपभोग न करेगा, तब तक पंचवर्ण की स्त्रियों के साथ बिहार क्या होगा।10

8 शून्यवाद

सिद्धों ने शैव और शाक्त तंत्र से प्रभावित होकर शून्यवाद के महत्व को स्वीकार कर अपने दर्शन में शामिल कर लिया, तथा साहित्य में अनेक प्रकार की व्याख्या की हे। उन्होने शून्य को प्रज्ञा के रूप में स्वीकार किया हैं। सिद्धों ने शून्य के चार प्रकार

बताए हैं–शून्य, अतिशून्य, सर्वशून्य, औरमहाशून्य। साघक अपनी कुण्डली को जागृत कर इसी महाशून्य को प्राप्त करने का प्रयास करता है। सिद्ध कवि तिलोपा इसी महाशून्य की ओर संकेत करते हुए कहते है–

> सहज महातरु तिलोए, ख–सम स्वभाव रे बाणत का कोए।
> जिमि जल पाणिड टालिका भेड न जाउ, तिन गण रअनारे समरसे गगन समाउ।।

9 भाषा–शैली

सिद्धों ने अपनी रचनाओं में अवहटठ भाषा का ही प्रयोग किया हैं। डॉ रामकुमार ने इसे संध्या भाषा कहा है।, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने तो सम्पूर्ण सिद्धसाहित्य को अपभ्रंश–काव्य की श्रेणी में रखा है।अनेक विद्वान इनकी भाषा में अपनी अपनी इच्छा के अनुसार अपनी अपनी भाषा की ओर संकेत करते हैं परन्तु वास्तविकता यह है कि सिद्ध साहित्य की जिस भाषा में रचना हुई है, उसमें संक्रातिकालीन आधुनिक आर्य भाषा के स्वरूप निहित हैं। इसी कारण इस सिद्ध साहित्य की भाषा में सभी आधुनिक आर्यभाषाओं के प्रारम्भिक स्वरूप के दर्शन होते हैं। फिर भी इनकी रचनाओं को अवहटठ में ही रचा माना जाना चाहिए।11

सिद्धों ने अवहटठ भाषा में उस समय प्रचलित लोक भाषा के शब्दों के साथ साथ अनेक पारिभाषिक एवं सांकेतिक शब्दों का भी प्रयोग किया है। इनमें नाद, पदम, निर्वाण, सहज, नाडी, आदि उल्लेखनीय हैं। सांकेतिक शब्दावली में गंगा, यमुना, रवि, ससि आदि प्रमुख हैं।

सिद्धों ने गीति शैली का प्रयोग किया हैं। उपदेशात्मक, व्यंग्यात्मक शैली के भी कहीं कहीं दर्शन होते हैं। उनके काव्य में दोहा, चौपाई, सोरठा, अरिल्ल, रोला, आदि छन्दों का प्रयोग भी मिलता है।फिर भी सिद्धों ने काव्य शास्त्र के छन्दविधान का पूरी तरह पालन नहीं किया है। मात्रिक एवं वार्णिक छन्दों में मात्रा और उचित वर्णों का अभाव स्पष्ट दिखाई देता है।12

सिद्धों की भाषा प्रतीकात्मक है, उसमें गम्भीर भावों को प्रकट करने के लिए प्रतीकों का प्रयोग किया हैं। सिद्धों की विशेषता है कि उन्होने अपनी भाषा को सजाने के लिए अलंकारों का प्रयोग नहीं किया हैं, फिर भी उनकी भाषा अन्त्यानुप्रास से युक्त है। इसके अतिरिक्त उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक, आदि अलेकार भी इनक काव्य में दिखाई देते हैं।

सन्दर्भ सूचि

1. डॉ नगेन्द्र हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ 112
2. डॉ रामकुमार हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास पृ 134
3. उपरोक्त पृ 57
4. डॉ गणपति चन्द्र गुप्त हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास पृ135
5. डॉ नगेन्द्र इतिहास सम्पादन पृ65
6. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य की भूमिका पृ 176
7. उपरोक्त पृ 87
8. उपरोक्त पृ 43
9. डॉ नगेन्द्र इतिहांस सम्पादन पृ 31
10. उपरोक्त पृ34
11. डॉ भोला नाथ तिवारी हिन्दी साहित्य पृ64
12. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य की भूमिका पृ29